W/R

न्यायालय राजस्व मण्डल राजस्थान, अजमेर

अपील/डिक्री/टीए/7795/2001/उदयपुर

श्री चारभुजा जी स्थान देह जरिये संरक्षक श्री मोडीदास पुत्र श्री भगवानदास जी बैरागी निवासी ग्राम डबोक तहसील मावली जिला उदयपुर।

.....**अपीलार्थी**

बनाम

1– रामनारायण पुत्र जमनालाल पाटीदार
2– रामेश्वर पुत्र श्री मोडा जी पाटीदार
3– कन्हैयालाल पुत्र श्री डालचंद पाटीदार
4– सुखलाल पुत्र श्री नवला पाटीदार (मृतक) जरिये वारीसानः–
4/1, नाथूलाल पुत्र स्व0 श्री सुखलाल
4/2. श्यामजी पुत्र स्व0 श्री सुखलाल
4/3. मु0 देउबाई पत्नि स्व0 श्री सुखलाल
5– छगनलाल पुत्र श्री लच्छीराम जाति ब्राहमण
6– उदा उर्फ उदयलाल पुत्र श्री नन्दा (मृतक) जरिये वारीसान
6/1. हंगामी बेवा उदयलाल
6/2. मांगीलाल पुत्र उदयलाल
6/3. तुलसीबाई पुत्री उदयलाल
6/4. बेबीबाई पुत्री उदयलाल
6/5. लालीबाई पुत्री उदयलाल
6/6. देवलीबाई पुत्री उदयलाल
समस्त जाति तेली
7– देवा पुत्र गोपाल जी तेली
8– भंवरिया पुत्र धन्ना जी माली
9– शिवलाल पुत्र कमला ब्राहमण (मृतक) जरिये वारीसान
9/1. लालीबाई बेवा शिवलाल
10– नारायण पुत्र भेरा जी गाडरी

.....**प्रत्यर्थीगण**

खण्ड–पीठ
श्री बी.एल.गुप्ता , सदस्य
श्री मूलचन्द मीणा, सदस्य

उपस्थित :
श्री पूर्णाशंकर दशोरा, अभिभाषक अपीलार्थी
श्री जसवंत सिंह सांखला, अभिभाषक प्रत्यर्थी संख्या 2,3,5,7,8,10.
श्री ओंकारलाल दवे, अभिभाषक प्रत्यर्थी संख्या 1, 4/1 से 4/3, 6/1 से 6/6 व 9/1 के पक्ष में।

निर्णय

दिनांक :—04—09—2012

1— यह द्वितीय अपील भू प्रबंध अधिकारी पदेन राजस्व अपील प्राधिकारी, उदयपुर (प्रथम अपीलीय न्यायालय) द्वारा अपील संख्या 339/2001 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 11—09—2001 के विरूद्ध राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 (संक्षेप में 'अधिनियम, 1955') की धारा 224 के अन्तर्गत प्रस्तुत की गयी है।

2— अपील ज्ञापन अनुसार तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी/वादी ने प्रतिवादीगण/प्रत्यर्थीगण के विरूद्ध न्यायालय सहायक कलेक्टर वल्लभनगर के समक्ष एक राजस्व वाद अधिनियम, 1955 की धारा 188 व 92ए के अन्तर्गत प्रस्तुत किया, जो स्थानान्तरित होकर सहायक कलेक्टर मावली (परीक्षण न्यायालय) के यहां प्रस्तुत हुआ। उक्त वाद में वादी अपीलार्थी ने यह कथन किया कि मौजा डबोक तहसील मावली में स्थित खसरा नम्बर 1425 रकबा 1 बीघा 2 बिस्वा, खसरा नंबर 1426 रकबा 3 बिस्वा, खसरा नंबर 1750 रकबा 6 बीघा 2 बिस्वा, खसरा नंबर 3096 से 3105, खसरा नंबर 3107 से 3112 कुल किता 19 रकबा 30 बीघा 15 बिस्वा भूमि संवत् 1985 से वादी अपीलार्थी मंदिर के नाम पर दर्ज है तथा मंदिर के संरक्षक मोडीदास के पिता श्री भगवानदास मंदिर के पुजारी के रूप में दर्ज हैं और उपरोक्त वर्णित आराजीयात पर काबिज होकर मंदिर की ओर से काश्त कर रहे हैं तथा फसल से मंदिर की सेवा—पूजा करते हैं। वादग्रस्त भूमि पर एक कुए का निर्माण भी पुजारी ने करवाकर बिजली की मोटर आदि लगवाई है। उपरोक्त भूमि पर प्रतिवादीगण प्रत्यर्थीगण का कोई हक, अधिकार तथा स्वतत्व नहीं है किन्तु प्रतिवादी/प्रत्यर्थीगण विवादित भूमि से वादी/ अपीलार्थी को बेदखल करना चाहते हैं जबकि वादी/अपीलार्थी के पूर्वज वादी/अपीलार्थी मंदिर की सेवा पूजा करते चले आ रहे है एवं उक्त आराजीयात पर उसी समय से काबिजकाश्त होकर उपभोग, उपयोग कर रहे है तथा लगान जमा करा रहे है। किन्तु प्रतिवादीगण/ प्रत्यर्थीगण बिना किसी कारण के वादी/अपीलार्थी से द्वेषता रखने एवं परेशान करने की मंशा से दखलन्दाजी कर रहे है तथा बार बार बिजली की मोटर एंव मकान गिराने की धमकी देने के कारण विवादित आराजी बाबत् वाद प्रस्तुत कर प्रतिवादीगण/प्रत्यर्थीगण को वादग्रस्त भूमि पर दखलदांजी नहीं करने हेतु स्थाई निषेधाज्ञा से पाबंद कर डिक्री पारित की जावे।

3— उक्त वाद का प्रतिवाद—पत्र प्रतिवादीगण/प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत कर कथन किया गया कि अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत वाद मिथ्या है तथा राजस्व अधिकारियों से मिलकर अपीलार्थी ने राजस्व अभिलेख में अपना नाम दर्ज करवा लिया जबकि विवादित आराजी मंदिर की संपत्ति है। उक्त बाबत एक रेफरेंस राजस्व मंडल में प्रस्तुत हुआ जो स्वीकार किया जाकर विवादित आराजी से पुजारियों के नाम हटाते हुये पुनः

मंदिर के नाम दर्ज किये जाने के आदेश दिये गये। अतः वाद खारिज किया जावे।

4— वादी/अपीलार्थी द्वारा उक्त वाद के साथ प्रस्तुत धारा 212 अधिनियम, 1955 के प्रार्थना पत्र पर निगरानी संख्या 114/94 में मण्डल द्वारा ही दिनांक 14—6—2000 द्वारा उक्त भूमि पर तहसीलदार मावली को रिसीवर भी नियुक्त किया गया है।

5— दौराने वाद प्रतिवादीगण/प्रत्यर्थीगण ने एक प्रार्थना पत्र आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता प्रस्तुत कर कथन किया कि वादी अपीलार्थी मंदिर का संरक्षक नहीं है, क्योंकि मंदिर के प्रबंधन हेतु बनाये गये ट्रस्ट को सक्षम अधिकारी के न्यायालय से पंजीकृत करवाया जा चुका है। वादी/अपीलार्थी द्वारा जवाब प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया गया और परीक्षण न्यायालय ने दोनों पक्षों को सुनकर प्रतिवादी/प्रत्यर्थीगण के प्रार्थना पत्र आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता को स्वीकार कर लिया और अपने निर्णय एंव डिक्री दिनांक 02—03—2001 द्वारा अपीलार्थी को मंदिर का संरक्षक नहीं माना एवं दावा लाने का अधिकार नहीं मानते हुये अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत वाद खारिज कर दिया। उक्त निर्णय एवं डिक्री दिनांक 02—03—2001 के विरूद्ध प्रथम अपील न्यायालय भू प्रबंध अधिकारी पदेन राजस्व अपील प्राधिकारी, उदयपुर के समक्ष पेश की गई। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 11—09—2001 द्वारा अपीलार्थी की प्रथम अपील खारिज कर दी। प्रथम अपीलीय न्यायालय के उक्त निर्णय एंव डिक्री से व्यथित होकर अपीलार्थी ने हस्तगत द्वितीय अपील राजस्व मण्डल में प्रस्तुत की है।

6— उभय पक्ष की बहस सुनी गई।

7— विद्वान अभिभाषक अपीलार्थी ने अपील ज्ञापन में वर्णित तथ्यों को दोहराते हुये बहस में अभिकथन किया किः—

(1) यह कि पूर्वजों के समय से वादी/अपीलार्थी मोड़ीदास वादी मन्दिर के पुजारी एवं संरक्षक हैं। पहले सम्वत 1985 से वादी/अपीलार्थी मोड़ीदास के पिता श्री भगवानदास और उसके बाद स्वयं वादी/अपीलार्थी मोड़ीदास उक्त मन्दिर की सेवा पूजा करते आ रहे हैं और इस कारण वादी/ अपीलार्थी ही मन्दिर श्री चारभुजा के असली संरक्षक हैं। संरक्षक के रुप में वादी/ अपीलार्थी मोड़ीदास मन्दिर के हितों की सुरक्षार्थ दावा लाने में सक्षम हैं और ऐसे दावे को आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत खारिज नहीं किया जा सकता है।

(2) यह कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के प्रार्थनापत्र का निर्णय केवल वाद—पत्र के अभिकथनों के आधार पर ही किया जाता है और वादोत्तर अथवा आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रार्थनापत्र में किये गये अतिरिक्त कथनों के आधार पर ऐसे प्रार्थनापत्र का निर्णय नहीं किया जा सकता है।

वादी/अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत धारा 188 अधिनियम, 1955 का दावा किसी भी तरह से विधि से वर्जित नहीं है। वाद–पत्र में भी ऐसा कोई अभिकथन नहीं है जिससे वाद विधि से वर्जित होता हो। अतः आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रार्थनापत्र को स्वीकार करके व दावा खारिज करके दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा गंभीर विधिक त्रुटि कारित की है।

(3) यह कि हस्तगत दावा 1993 से चल रहा है और विवाद्यक विरचित की जाकर साक्ष्य हेतु नियत था। इतने विलम्बित स्तर प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता का प्रार्थना पत्र परीक्षण न्यायालय ने बिना कोई साक्ष्य लिये स्वीकार करके अपीलार्थी का वाद खारिज कर दिया।

(4) यह कि राजस्व मण्डल द्वारा इसी प्रकरण में धारा 212 राजस्थान काश्तकारी अधिनियम की कार्यवाही में दिनांक 14–06–2000 को रिसीवर नियुक्त किया था तथा उक्त निर्णय में ट्रस्ट में जाति विशेष के व्यक्तियों को रखना मान कर ऐसे ट्रस्ट को कब्जा देना उचित नहीं माना है। मण्डल के उक्त मत को भी दोनो अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा नजरअन्दाज किया है।

(5) यह कि हस्तगत वाद अपीलार्थी मोडीदास ने प्रस्तुत किया है तथा वाद में विवादित आराजी मन्दिर की होना स्वीकार किया है तथा वादी का कब्जा पुजारी की हैसियत से होना अंकित किया है तथा पूर्वजों के समय से ही वादी विवादित आराजी पर काश्त कर मंदिर की सेवा–पूजा अर्चना करते आ रहे है। उक्त समस्त तथ्यों से अपीलार्थी का मंदिर का संरक्षक होना साबित होते हुये भी दोनो अधीनस्थ न्यायालयों ने अपीलार्थी को मंदिर का संरक्षक नहीं माना है।

(6) विद्वान अभिभाषक का यह भी अभिकथन है कि अगर तर्क के लिये वादी/अपीलार्थी को मन्दिर का संरक्षक नहीं माना जाता है तो भी वादी द्वारा प्रस्तुत वाद को केवल इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि उसे वाद लाने का अधिकार नहीं है। मन्दिर मूर्ति एक शास्वत अवयस्क है और कोई भी सामान्य व्यक्ति, जो उक्त मन्दिर मूर्ति के प्रति आस्था रखता है, मन्दिर मूर्ति के हितों की रक्षार्थ वाद ला सकता है।

(7) यह कि वादी/ अपीलार्थी द्वारा मूल वाद दिनांक 03–06–93 को प्रस्तुत किया था जबकि ट्रस्ट का रजिस्ट्रेशन दिनांक 29–12–95 यानि दौराने वाद कराया गया है। इसलिये दौराने दावा हुये ट्रस्ट के रजिस्ट्रेशन से मौजूदा वाद पर कोई असर नहीं था। किन्तु दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने इस कानूनी बिन्दु को भी नजरअन्दाज कर अपने क्षेत्राधिकार का दुरूपयोग किया है।

(8) यह कि विवादित आराजी रिसीवरी में है तथा वाद का निस्तारण विवाद्यक, साक्ष्य एंव अभिलेख आदि के आधार पर ही किया जा सकता है न कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के प्रार्थना पत्र के आधार पर।

उपरोक्त तर्कों के समर्थन में RLW 2007(1) RJ 298, 1995 RRD 668, AIR 2001 Raj. 44, 2008 DNJ (SC) 9, RLW 2010(1) (Raj) 140, and page 495, AIR 1985 SC 577, 2010 (2) RRT 1141 and 1146 आदि न्यायिक दृष्टान्त प्रस्तुत करते हुये अन्त में विद्वान अभिभाषक का तर्क है कि दोनो अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय अनियमित होने से खारिज किये जाकर यह अपील स्वीकार की जावे।

8— उपरोक्त तर्को का विरोध करते हुये प्रत्यर्थीगण की तरफ से दोनों विद्वान अभिभाषकगण ने अभिकथन किया किः—

(1) यह कि मन्दिर मूर्ति शाश्वत नाबालिग है और ऐसे मामले में कोई व्यक्ति उसका संरक्षक है अथवा नहीं— इसके लिये सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 32 नियम 4 (1) के प्रावधानानुसार यह देखना आवश्यक माना गया है कि वह वास्तव में नाबालिग के हितों की रक्षा भी कर रहा है अथवा नहीं। अगर तथाकथित संरक्षक के हित अवयस्क के हितों के विपरीत हैं तो ऐसा व्यक्ति नाबालिग का संरक्षक अथवा वादमित्र नहीं हो सकता है। हस्तगत प्रकरण में चूंकि वादी मोड़ीदास आदि ने पूर्व में मन्दिर मूर्ति की भूमि को अपने नाम दर्ज करा कर कुछ भूमि का बेचान भी कर दिया था, जिससे यह स्पष्ट हो चुका था कि वादी मोड़ीदास आदि के हित मन्दिर के हितों के विपरीत है। अतः परीक्षण न्यायालय एवं प्रथम अपीलीय न्यायालय का यह निष्कर्ष उचित एवं अहस्तक्षेपनीय है कि वादीगण मन्दिर के वादमित्र होने का अधिकार खो चुके हैं और उन्हें मन्दिर की तरफ से वाद लाने का कोई अधिकार नहीं है।

(2) यह कि इस प्रकरण में ट्रस्ट गठित करने की कार्यवाही 1992 में वाद प्रस्तुत करने से पूर्व ही प्रारम्भ हो चुकी थी जिसकी पूरी जानकारी वादीगण मोड़ीदास आदि को थी क्योंकि वह भी ट्रस्ट के सदस्यों की सूची में शामिल था। आपत्तियां आदि आमंत्रित करके गठन की कार्यवाही पूरी होने में समय लगा। सहायक देवस्थान आयुक्त द्वारा गठन का आदेश 1995 में किया गया जिसकी वादीगण/अपीलार्थी द्वारा देवस्थान आयुक्त को अपील की गयी। उक्त अपील भी दिनांक 09—11—1998 को खारिज हो गयी। इस प्रकार ट्रस्ट गठन की पूरी जानकारी होते हुये भी वादीगण द्वारा दावा प्रस्तुत किया गया है जो चलने योग्य नहीं होने से दोनों अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय उचित हैं।

(3) विद्वान अभिभाषकगण का यह भी तर्क है कि वाद यदि आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत खारिज नहीं किया जा सकता है तो भी ओछी प्रकृति के (frivolous) वाद को न्यायालय द्वारा धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत किसी भी स्तर पर खारिज किया जा सकता है। अतः अपीलार्थी के विद्वान अभिभाषक के इस तर्क का कोई महत्व नहीं है कि आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रार्थनापत्र का निर्णय केवल वादपत्र के अभिवचनों के आधार पर ही किया जाना चाहिये। तुच्छ प्रकृति के वाद को न्यायालय किसी भी स्तर पर खारिज कर सकता है।

(4) विद्वान अभिभाषकगण का यह भी तर्क है कि वादी मोड़ीदास आदि अगर मन्दिर के पुजारी भी हैं तो भी ट्रस्ट के गठन के बाद उसका अधिकार मन्दिर की सेवा पूजा करने तक सीमित है। पुजारी का अर्थ सम्पत्ति का प्रबन्धन करने का अधिकार नहीं है।

(5) यह कि दोनों ही अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित समवर्ती निर्णयों में क्षेत्राधिकार सम्बन्धी अथवा विधिक या तथ्यपरक ऐसी कोई त्रुटि नहीं है जिसके आधार पर प्रस्तुत द्वितीय अपील के माध्यम से उसमें हस्तक्षेप किया जा सके।

उपरोक्त तर्कों के समर्थन में विद्वान अभिभाषकगण द्वारा न्यायिक दृष्टान्त 1993 RRD 688, 2008 RBJ 678, 1998 RRD 453, 1995 RRD 661, और 2008 (3) WLC (Raj) 534 (HC) प्रस्तुत करते हुये अन्त में अनुरोध किया है कि सारहीन होने से हस्तगत अपील को खारिज किया जावे।

9— अपील ज्ञापन में वर्णित तथ्यों और अधीनस्थ न्यायालय की पत्रावली में संलग्न दस्तावेजात एवं दोनों आलोच्य निर्णयों का आद्योपान्त अवलोकन व अध्ययन किया गया और दोनों पक्षों के विद्वान अभिभाषकगण द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर मनन किया गया तथा प्रस्तुत न्यायिक दृष्टांतों का गहनता से अवलोकन किया गया।

10— परीक्षण न्यायालय में वादी/ प्रत्यर्थी द्वारा वाद राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 की धारा 188 एवं 92ए के अन्तर्गत वास्ते स्थायी निषेधाज्ञा प्रस्तुत किया गया था। न्यायालय द्वारा प्रतिवादीगण/ प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के अन्तर्गत प्रस्तुत प्रार्थनापत्र को स्वीकार करते हुये दावे को विधि से वर्जित मानकर खारिज किया है। प्रकरण को समझने के लिये सिविल प्रक्रिया संहिता के आर्ड़र 7 नियम 11 का अवलोकन कर लेना उचित रहेगा, जो कि निम्न प्रकार हैः—

> ***"11. Rejection of plaint.-*** *The plaint shall be rejected in the following cases:—*
> *(a) where it does not disclose a cause of action;*
> *(b) where the relief claimed is undervalued, and the plaintiff, on being required by the Court to correct the valuation within a time to be fixed by the Court, fails to do so;*
> *(c) where the relief claimed is properly valued, but the plaint is returned upon paper insufficiently stamped, and the plaintiff, on being required by the Court to supply the requisite stamp-paper within a time to be fixed by the Court, fails to do so;*
> *(d) where the suit appears from the statement in the plaint to be barred by any law;*
> *(e) where it is not filed in duplicate;*
> *(f) where the plaintiff fails to comply with the provisions of rule 9;*
> *Provided that the time fixed by the Court for the correction of the valuation or supplying of the requisite stamp-paper shall*

not be extended unless the Court, for reasons to be recorded, is satisfied that the plaintiff was prevented by any cause of an exceptional nature from correcting the valuation or supplying the requisite stamp-paper, as the case may be, within the time fixed by the Court and that refusal to extend such time would cause grave injustice to the plaintiff.

आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के उपरोक्त प्रावधानों का सारांश है कि न्यायालय द्वारा वाद को खारिज कर दिया जावेगा यदि (क) वाद हेतुक को प्रकट नहीं किया गया हो, (ख) अनुतोष का मूल्यांकन कम किया गया हो, (ग) वाद पत्र अपर्याप्त स्टाम्प पत्रों पर लिखा गया हो, (घ) वाद किसी विधि द्वारा वर्जित हो, (ड.) वादपत्र डुप्लीकेट में प्रस्तुत नहीं करना अथवा (च) नियम 9 की अनुपालना नहीं की गयी हो।

11— विधि की यह सुस्थापित स्थिति है कि जब न्यायालय द्वारा वाद का परीक्षण आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत इस आधार पर किया जा रहा हो कि वाद विधि द्वारा वर्जित है अर्थात परीक्षण का आधार आदेश 7 नियम 11 का उपनियम (घ) हो तो उपनियम (घ) की शब्दावली "where the suit **appears from the statement in the plaint** to be barred by any law" पर ध्यान देना आवश्यक है जिसका आशय यह है कि आदेश 7 नियम 11 (घ) के अन्तर्गत वाद खारिज करते समय अथवा किसी पक्षकार द्वारा प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया गया है तो प्रार्थनापत्र में यह स्पष्ट करना होगा कि दावा वादपत्र के "**कौन से अभिकथन**" के कारण दावा "**किस विधि**" से बाधित है। अगर वादपत्र के किसी अभिकथन से दावा विधि से वर्जित नहीं है तो आदेश 7 नियम 11 के प्रार्थनापत्र में वर्णित तथ्यों के आधार दावे को प्राथमिक रुप से खारिज नहीं किया जा सकता है। वादोत्तर, प्रतिवाद पत्र अथवा आदेश 7 नियम 11 के प्रार्थनापत्र में वर्णित ऐसे तथ्यों/ अभिवचनों का कोई महत्व नहीं है जो कि वादपत्र के अतिरिक्त हैं। आदेश 7 नियम 11 के तहत प्रस्तुत प्रार्थनापत्र में अथवा वादोत्तर में वर्णित अतिरिक्त कथनों/ तथ्यों के आधार पर अलग से विवाद्यक विरचित किया जा सकता है जिसका निर्णय साक्ष्य एवं दस्तावेजात के विवेचन के आधार पर किया जायेगा। ऐसे विवाद्यक का निर्णय अन्य विवाद्यकों के साथ किया जा सकता है अथवा अलग से अन्य विवाद्यकों से पूर्व भी किया जा सकता है। किन्तु इसके लिये साक्ष्य एवं दस्तावेजात का अवसर एव विवेचना आवश्यक है। इस दृष्टि से विद्वान अभिभाषक अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत न्यायिक दृष्टान्त— 2008 (1) DNJ (SC) 9, 2010 (1) RLW (Raj) 140, 2010 (1) DNJ (Raj) 495, AIR 1985 SC 577, 2010 (2) RRT 1141 और 2010 (2) RRT 1146 हस्तगत प्रकरण पर पूर्णतः चस्पा होते हैं। माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा रामस्वरुप एवं अन्य के प्रकरण में दिनांक 05—10—2009 को पारित निर्णय - 2010 (1) DNJ (Raj) 495 के अनुच्छेद 2 व 3 को यहा उदधृत करना हम उचित समझते हैं जो कि निम्न प्रकार हैं:—

"2. Learned counsel for the petitioner contended that Rajkumar alleged Sevayat was not competent to file the suit on behalf of Thakurji Shri Kalyanji Maharaj known as Kalali Temple. It was then submitted that disputed properties were already declared personal properties of defendant by the competent authority under section 23(2) of the Rajasthan Land Reforms and Jagir Resumption Act, 1952 (in short the Act of 1952) and the same cannot be challenged in any civil court, as such the suit was barred by section 46 of the Act of 1952 and this fact has not properly been considered by the trial court while deciding the application.

3. I have considered the above submissions in the light of the impugned order. So far objection raised in the application with regard to competency of Sevayat Rajkumar to file suit on behalf of Thakurji Shri Kalyanji Maharaj is concerned, it cannot be taken to be a ground of rejection of plaint under Order 7 Rule 11 of CPC and so far non-maintainability of the suit on account of bar by any law is concerned, it is true that suit can be rejected by the court if such suit appears to be barred by any law from the statement of the plaint as provided under Order 7 Rule 11 of CPC but facts highlighted by the defendant cannot be considered for rejection of the plaint under such provision if such bar of law does not appear from the statement of the plaint. The trial court has rightly considered and rejected the application filed under Order 7 Rule 11 of CPC which does not require any interference by this Court. Therefore, there is not merit in this civil revision petition."

12— माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों— WLC 2011 (4) page 531, और 2012 (2) DNJ (Raj) page 582 में भी इसी सिद्धान्त को पुष्ट किया गया है। गोविन्द नारायण के प्रकरण WLC 2011 (4) page 531 में तो माननीय उच्च न्यायालय द्वारा आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत प्रार्थनापत्र प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में प्रतिवादी के अधिकार को भी प्रश्नगत किया है। प्रसंगवश उक्त निर्णय दिनांक 18—08—2011 के अनुच्छेद 6, 7, 8 व 9 को हम उदधृत करना उचित समझते हैं जो कि निम्न प्रकार हैः—

"6- Otherwise too, the power to reject the plaint under Order 7 Rule 11 CPC is conferred on the court and not on the party. Thus, it is the Court alone, which can exercise the power to reject the plaint under Order 7 Rule 11 CPC. Rule 11 deals with the rejection of the plaint, which reads thus:

***11. Rejection of plaint**.-The plaint shall be rejected in the following cases:-*

(a) where it does not disclose a cause of action;

(b) where the relief claimed is undervalued, and the plaintiff, on being required by the Court to correct the valuation within a time to be fixed by the Court, fails to do so;

(c) where the relief claimed is properly valued but the plaint is written upon paper insufficiently stamped, and the plaintiff, on being required by the Court to supply the requisite stamp-paper within a time to be fixed by the court, fails to do so;
(d) where the suit appears from the statement in the plaint to be barred by any law;
(e) where it is not filed in duplicate;
(f) where the plaintiff fails to comply with the provisions of rule 9.

Provided that the time fixed by the Court for the correction of the valuation or supplying of the requisite stamp-paper shall not be extended unless the Court, for reasons to be recorded, is satisfied that the plaintiff was prevented by any cause of an exceptional nature for correcting the valuation or supplying the requisite stamp-paper, as the case may be, within the time fixed by the Court and that refusal to extend such time would cause grave injustice to the plaintiff.

7- When a plaint is presented by the plaintiff in the Court, it is for the Court to pass an order with regard to the registration of plaint on the report of Munsarim or Reader of the Court, as the case may be.

8- Rule 32 of General Rule (Civil), 1986 reads thus:
A Munsarim or Reader of a Civil Court appointed to receive plaints, shall examine each plaint presented to him, and shall report thereon whether the provisions of the Code and Court Fees Act have been observed and whether the claim is within the jurisdiction of the Court, constitutes a cause of action, and has been presented within the period prescribed for the institution of such a suit. The Munsarim or Reader shall see that the actual date of presentation of the plaint is entered upon the impressed stamp and adhesive label, if any, below the date of purchase endorsed on them. On the back of all plaints, the Munsarim or Reader shall note:-
(a) date and time of presentation of the plaint;
(b) name of presenter;
(c) classification of suit, and
(d) court fees paid.

9- Thus, from a bare perusal of the language of Rule 32 of General Rules (Civil), 1986 and Rule 11 of Order 7 CPC, it is found that the court has to see as to whether plaint discloses any cause of action; it is sufficiently stamped; and has been presented within time prescribed for the institution of such a suit. If the plaint does not constitute a cause of action or it is insufficiently stamped or it is barred by law, then in that case, on the basis of report of the Munsrim or Reader, as the case may be, the Court shall reject the plaint invoking the powers under Rule 11 of Order 7 CPC. The Court is not required to

pass an order under Order 7 Rule 11 CPC at the behest of the defendant when an application is filed under this provision by the defendant in this regard. The power to attract the provisions of Order 7 Rule 11 CPC is not conferred on the party to the suit. On the contrary, it is the bounden duty of every Court to obtain the report of the Munsarim or Reader of the Court, as the case may be, and thereafter if the contents of the plaint constitute a cause of action; it is sufficiently stamped and it is not barred by law, the Court shall order to register the plaint and if it does not disclose any cause of action or it is insufficiently stamped or it is barred by law, then without there being any prayer of the defendant, the Court is duty bound to reject the plaint suo-moto. Thus, the power to attract the provisions of Order 7 Rule 11 CPC is not conferred on the party, but it is conferred on the Court and it is the Court alone, which can exercise the powers to reject the plaint under Order 7 Rule 11 CPC. If viewed from this angle, it can safely be inferred that the petitioner-defendant had no right to file the application under Order 7 Rule 11 CPC imploring the Court to reject the plaint and the application was not maintainable."

उपरोक्त न्यायिक दृष्टान्त में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि किसी भी पक्षकार को आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत वादपत्र को खारिज करने हेतु प्रार्थनापत्र प्रस्तुत करने का अधिकार नहीं है। उक्त प्रावधान केवल न्यायालय के लिये है।

13— उपरोक्त अनुच्छेद 10 से 12 में किये गये विवेचन से यह स्पष्ट है कि वादपत्र में वर्णित तथ्यों/ अभिकथनों से बाहर जाकर सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के अन्तर्गत किसी वाद को इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि वाद विधि से वर्जित है। अगर किन्हीं बिन्दुओं के विनिश्चयन हेतु प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत वादोत्तर, प्रतिवाद—पत्र अथवा प्रार्थनापत्र में वर्णित अतिरिक्त कथनों को पढना पड़े अथवा अन्य दस्तावेजात का अवलम्बन लेना पड़े तो ऐसे मामले में दावा आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत खारिज नहीं किया जा सकता है। ऐसे मामले में वादपत्र, वादोत्तर आदि के आधार पर विवाद्यक विरचित किये जाने चाहिये और तत्पश्चात साक्ष्य आदि की विवेचना के पश्चात ही निर्णय किया जाना होता है। किन्हीं विवाद्यक को, विधिक प्रकृति का होने की स्थिति में, अन्य विवाद्यक से पूर्व निर्णीत किया जा सकता है किन्तु इसके लिये प्रकरण को साक्ष्य एवं दस्तावेजात के स्तर से गुजारना व साक्ष्य एवं दस्तावेजात की विवेचना करना आवश्यक है।

14— हस्तगत प्रकरण में परीक्षण न्यायालय का निष्कर्ष है कि— **" जहां तक नानादास व मोड़ीदास के मन्दिर का नेक्स्ट फ्रेण्ड होने का प्रश्न है, दस्तावेजों के आधार पर यह निर्विवाद सत्य है कि भूमि पूर्व में मन्दिर की थी जिसे नानादास एवं मोड़ीदास ने अपने नाम करवा ली।**

इतना ही नहीं उसमें से कुछ भूमि विक्रय भी कर दी जिसे माननीय राजस्व मण्डल के निर्णय पर पुनः मन्दिर के नाम स्वत्व में दर्ज की गयी थी। निश्चय ही ऐसे में यह कदापि नहीं माना जा सकता कि नानादास एवं मोड़ीदास, जो कि मन्दिर के पुजारी हैं, मन्दिर के नेक्स्ट फ्रेण्ड हैं तथा उसके हितों की रक्षा कर रहे हैं। बल्कि उनका कृत्य तो इसके विपरीत है। दूसरा बिन्दु यह है कि प्रतिवादी संख्या 1 की अध्यक्षता में बनाया गया ट्रस्ट **सक्षम न्यायालय द्वारा दिनांक 15–01–1996 को रजिस्टर्ड़ करवा दिया गया था। ..... हमारा विचार एवं निष्कर्ष है कि यदि किसी deity/मन्दिर के संचालन हेतु कोई सक्षम अधिकारिता रखने वाला पंजीकृत** ट्रस्ट **बनाया जा चुका है तो ऐसी स्थिति में उसके हितों की रक्षा हेतु वही body अधिकृत हो सकती है।''** और अन्त में मोड़ीदास आदि के कृत्य मन्दिर के हितों के विरुद्ध मानते हुये परीक्षण न्यायालय ने उन्हें मन्दिर मूर्ति को नेक्स्ट फ्रेण्ड नहीं मानते हुये प्रकरण को आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता का प्रार्थनापत्र स्वीकार करते हुये खारिज किया है। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा भी इसी मत को पुष्ट किया गया है। हमारा यह मत है कि परीक्षण न्यायालय का यह निष्कर्ष वादपत्र के किसी अभिवचन (averments in the plaint) पर आधारित नहीं हो कर प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत वादोत्तर, आदेश 7 नियम 11 के प्रार्थनापत्र आदि में वर्णित तथ्यों एवं दस्तावेजात पर आधारित है जो कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के दायरे से बाहर हैं। वादी के वादपत्र में ऐसा कोई अभिवचन नहीं है जिसके आधार पर परीक्षण न्यायालय के इस निष्कर्ष की पुष्टी होती हो। इस कारण हमारे सुविचारित मत अनुसार परीक्षण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय व डिक्री दिनांक 02–03–2001 आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के दायरे से बाहर होने से पुष्टनीय नहीं है।

15– विद्वान अभिभाषकद्वय प्रत्यर्थीगण द्वारा न्यायिक दृष्टान्त WLC 2008 (3) (Raj) 534 (HC) से समर्थन लेते हुये यह भी तर्क प्रस्तुत किया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के दायरे में नहीं आने के बावजूद न्यायालय द्वारा धारा 151 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत ऐसे दावे को किसी भी स्तर पर खारिज किया जा सकता है जो कि ओछी (frivolous) प्रकृति का और निराधार हो। हस्तगत वाद को ओछी (frivolous) प्रकृति का एवं निराधार सिद्ध करने के लिये विद्वान अभिभाषकद्वय द्वारा इन तथ्यों को आधार बनाया जा रहा है कि वादीगण द्वारा पूर्व में मन्दिर मूर्ति की वादग्रस्त भूमि को अपने नाम खातेदारी में दर्ज करा लिया था और कुछ भूमि का बेचान भी कर दिया था। बाद में रेफेरेंस प्रकरण में राजस्व मण्डल द्वारा वादग्रस्त भूमि को वापिस मन्दिर मूर्ति के नाम दर्ज करने के आदेश दिये गये। इस प्रकार वादी के हित मन्दिर मूर्ति के हितों के विपरीत होने से अब वादी मन्दिर मूर्ति का वाद–मित्र (next friend) नहीं रह गया है। अतः वादीगण द्वारा प्रस्तुत वाद विधि से वर्जित होने से चलने योग्य नहीं है। इस तर्क के समर्थन में विद्वान

अभिभाषकद्वय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 32 नियम 4 (1) एवं न्यायिक दृष्टान्त 1993 RRD 688 और 2008 RBJ 678 का सहारा लिया गया है। इस बिन्दु पर हमारा मत है कि आदेश 32 नियम 4 (1) के अन्तर्गत किसी व्यक्ति की पात्रता के परीक्षण का प्रश्न तथ्यात्मक साक्ष्य पर आधारित विधिक प्रश्न है और जब तक साक्ष्य एवं दस्तावेजात के आधार पर यह सिद्ध नहीं कर दिया जावे कि अमुक व्यक्ति नाबालिग का वादमित्र होने का अधिकार खो चुका है तब तक इस प्रश्न का विनिश्चयन नहीं किया जा सकता है। वर्तमान प्रकरण में वादी मोड़ीदास अपने व्यवहार एवं कृत्यों से मन्दिर मूर्ति का वादमित्र बनने का अधिकार खो चुका है या नहीं, इस विधिक प्रश्न का विनिश्चयन करने हेतु मोड़ीदास के व्यवहार एवं कृत्य बाबत तथ्यात्मक साक्ष्य का विवेचन आवश्यक है जो कि समुचित विवाद्यक बना कर पक्षकारान को साक्ष्य एवं सुनवाई का समुचित अवसर देने के बाद ही सम्भव है। इसी प्रकार प्रतिवादी संख्या–1 की अध्यक्षता में ट्रस्ट का गठन दौराने वाद हुआ है या वाद से पहले और अगर दौराने वाद हुआ है तो विचाराधीन वाद पर उसका क्या असर होगा? ऐसे ही कुछ बिन्दु हैं जो तथ्यों एवं विधि के मिश्रित प्रश्न हैं और इनका निर्णय भी विवाद्यक विरचित करके दोनों पक्षों को साक्ष्य एवं सुनवाई का समुचित अवसर देकर ही किया जा सकता है और किया जाना चाहिये था। किन्तु परीक्षण न्यायालय द्वारा आदेश 7 नियम 11 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रार्थनापत्र का निर्णय करते हुये इन सभी प्रश्नों का विनिश्चयन कर दिया जो विधि एवं प्रक्रिया की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण कार्यवाही है। अतः आदेश 32 नियम 4(1) सिविल प्रक्रिया संहिता के आधार पर प्रस्तुत विद्वान अभिभाषक का यह तर्क स्वीकार्य नहीं है।

16– उपरोक्त विवेचन के आधार पर इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि परीक्षण न्यायालय का आलोच्य निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 11 के दायरे से बाहर है जो विधिक प्रक्रिया पूरी किये बिना पारित किया गया है। परिणामतः हस्तगत द्वितीय अपील स्वीकार किये जाने योग्य है व दोनों अधीनस्थ न्यायालयों के आलोच्य निर्णय निरस्त किये जाकर प्रकरण परीक्षण न्यायालय को इस निर्देश के साथ प्रतिप्रेषित किये जाने योग्य है कि वादपत्र, वादोत्तर आदि के आधार पर आवश्यक विवाद्यक विरचित किये जावें और दोनों पक्षों को दस्तरावेजी व मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत करने व सुनवाई का समुचित अवसर प्रदान करने के बाद प्रकरण का निर्णय विधिक प्रावधानानुसार गुणावगुण पर करें।

17– परिणामतः हस्तगत अपील एतदद्वारा स्वीकार की जाती है और न्यायालय सहायक कलेक्टर, मावली द्वारा राजस्व वाद संख्या 227/98 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 02–03–2001 को तथा न्यायालय भू प्रबंध अधिकारी पदेन राजस्व अपील प्राधिकारी, उदयपुर द्वारा अपील संख्या 339/2001 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 11–09–2001 को निरस्त करते हुये प्रकरण न्यायालय सहायक

कलेक्टर (उपखण्ड अधिकारी), मावली को इस निर्देश के साथ प्रतिप्रेषित किया जाता है कि इस न्यायालय द्वारा पूर्व अनुच्छेद 15 में व्यक्त मत एवं निर्देशों की पालना करते हुये प्रकरण का निर्णय विधिक प्रावधानानुसार गुणावगुण पर किया जावे।

निर्णय खुले न्यायालय में सुनाया गया ।

(मूलचन्द मीणा)
सदस्य

(बी.एल.गुप्ता)
सदस्य